विज्ञान समाचार–नवीन जानकारी

दीपक कोहली
पत्राचार हेतु पता– 5/104, विपुल खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ–226010, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

प्राप्त तिथि– 22.04.2015, स्वीकृत तिथि– 20.05.2015

भूगर्भीय खनिज को मिला "ब्रिजमैनाइट" नाम– लगभग 135 वर्ष पूर्व पृथ्वी पर गिरी एक चट्टान से हमारे वैज्ञानिकों को धरती के भीतर मौजूद सबसे आम पदार्थ खनिज(मिनरल) को नाम देने में मदद मिली है। इस पदार्थ को अब "ब्रिजमैनाइट" नाम दिया गया है। रोचक तथ्य यह है कि हमारी पृथ्वी का 38 प्रतिशत हिस्सा मैग्नीशियम आयरन सिलिकेट के अत्यन्त घने रूप में पाये जाने वाला यह मिनरल ही है। इसका नाम स्वर्गीय पर्सी ब्रिजमैन के नाम पर रखा गया है, जिन्हें सन् 1946 में भौतिकी का नोबेल मिला था। ब्रिजमैनाइट बहुत आम मैटीरियल है, फिर भी यह वैज्ञानिकों की पहुँच से दूर था। इसकी वजह यह है कि यह हमारी धरती की सतह से 660 से 2,900 किलोमीटर की गहराई में अत्यन्त ऊँचे दबाव में पाया जाता है। इसे धरती की ऊपरी सतह तक लाना संभव नहीं था। हमारे वैज्ञानिक कई दशकों से पृथ्वी के भीतर मौजूद इस खनिज के बारे में जानते थे। असल में यह मिनरल पृथ्वी की आंतरिक सतह में पैदा होने वाले भूकंप वाइब्रेशन(कंपन) में बदलाव कर देता है। इसका कोई प्राकृतिक सैम्पल नहीं था और विशेषज्ञ बिना किसी नाम के इसका अध्ययन कर रहे थे। लेकिन अमेरिका की "नेवादा यूनिवर्सिटी" के वैज्ञानिक "ओलिवर शॉउनर" की शोध टीम ने एक उल्का पिंड के भीतर ब्रिजमैनाइट को खोज लिया। अंतरिक्ष से आई यह चट्टान ऑस्ट्रेलिया के क्वींसलैण्ड में सन् 1879 में गिरी थी। इस खोज से अब वैज्ञानिकों को यह समझाने में मदद मिलेगी कि पृथ्वी की सतह के भीतर द्रव्यमान और ऊष्मा का बहाव किस तरह से होता है।

अब कृत्रिम स्मार्ट त्वचा से चमकेगी त्वचा– दक्षिण कोरिया के शोधकर्ता ने एक ऐसी कृत्रिम "स्मार्ट स्किन" का विकास करने में सफलता हासिल की है, जो मानव त्वचा जैसी ही सॉफ्ट और एलास्टिक है। इस स्किन के अंदर तमाम सेंसर लगाये गए हैं जिनमें यह तापमान और आर्द्रता एवं स्पर्श की संवेदना का भी अनुभव कर सकती है। शोधकर्ताओं ने सॉफ्ट सिलिकॉन रबर के भीतर माइक्रोस्कोपिक सेंसर और कुछ हीटर डालकर इस तरह की त्वचा विकसित करने में सफलता हासिल की है। "सियोल नेशनल यूनिवर्सिटी" के "स्कूल ऑफ केमिकल और बायोलॉजिकल इंजीनियरिंग" में प्रोफेसर दाए हेयोंग किम के नेतृत्व में काम करने वाली शोध टीम को यह कामयाबी मिली है। प्रोफेसर किम का कहना है कि इस शोध के बाद आगे ऐसी आर्टिफिशियल स्किन को विकसित करने में मदद मिलेगी, जो असली त्वचा जैसा व्यवहार कर सके। इस त्वचा के अंदर जो सेंसर लगाए गए हैं वे दबाव, तापमान और आर्द्रता को आंक सकते हैं और यह भी जान सकते हैं कि त्वचा को कितना खींचा जा रहा है। दूसरी ओर इसके अंदर जो हीटर होते हैं वे मानव शरीर जैसी गर्मी बनाये रखते हैं। शोधकर्ता के अनुसार यह आर्टिफिशियल स्किन ऐसी एक्टिविटीज में भी सही–सही कार्य करती पाई गई, जिनमें त्वचा 30 प्रतिशत तक खिंच जाती है, जैसे– कलाई को मोड़ना, हाथ मिलाना आदि। शोधकर्ताओं ने एक ऐसा प्रयोग भी किया, जिससे यह पता चला कि इस कृत्रिम त्वचा से चूहे के मस्तिष्क में दबाव का संवेदी संकेत गया है। शोधकर्ताओं ने कुछ माइक्रोइलेक्ट्रोड को चूहे के पेरिफेरल नर्व और आर्टिफिशियल स्किन के सेंसर से जोड़ दिया। स्किन पर दबाव डालने के बाद चूहे के इलेक्ट्रोइंसफेलोग्राम(ई.ई.जी.) से यह पता चला कि इलेक्ट्रोड के माध्यम से जो दबाव डाले गये थे, उसका इलेक्ट्रॉनिक सिग्नल मस्तिष्क तक पहुँच गया। यह शोधकार्य अंतर्राष्ट्रीय जर्नल "नेचर कम्युनिकेशंस" में प्रकाशित किया गया है।

अलार्म बगैर समय से जगायेगी घड़ी– यदि आप जल्दी जग नहीं पाते तो यह घड़ी आपके लिए विशेष रूप से काम की हो सकती है। वैज्ञानिकों ने ऐसी एक अलार्म घड़ी विकसित की है जो खुद पता लगा लेती है कि व्यक्ति का शरीर नींद पूरी कर जगने के लिए तैयार है। इस अलार्म घड़ी को "स्मार्ट आउरा बायो–क्लॉक" नाम दिया गया है। यह उच्च तकनीक युक्त विशेष सेंसर से सम्बद्ध है। यह सेंसर एक पैड की शक्ल में है जो उपयोग करने वाले के बिस्तर की चादर के नीचे लगाया जाता है। यह सेंसर वास्तव में मनुष्य के सांस लेने और दिल की धड़कन जैसी शारीरिक गतिविधियों को मापने में सक्षम है। शारीरिक गतिविधियों के आंकड़ों के आधार पर यह मनुष्य के सोने के ढंग की निगरानी करता है। यह सेंसर रंग बदलने में सक्षम एक लैंप से जुड़ा है, जिसमें स्पीकर लगा है। यह स्पीकर एक आईफोन एप्लीकेशन से जुड़ा है।

यह सोये हुए व्यक्ति को जगाता है। साथ ही यह किसी व्यक्ति की नींद सम्बन्धी आदतों की व्याख्या करने में भी मददगार हो सकता है। रंग बदलने वाला लैंप अलग–अलग समय में लाल, पीली, सफेद और नीली रोशनी प्रदर्शित कर सकता है। शारीरिक गतिविधि और रोशनी का तालमेल इस अलार्म घड़ी को समझा देता है कि कौन सा समय व्यक्ति के जगने का समय है और वह बजने लगती है। इसकी अनुमानित कीमत 180 पाउंड(लगभग 18 हजार रुपये) है। इस घड़ी का निर्माण फ्रेंच कम्पनी विदिंग्स ने किया है। इसको पहले पहल लॉस वेगास में कम्प्यूटर इलेक्ट्रॉनिक शो में प्रदर्शित किया गया था। यह भविष्य का गैजेट सही समय पर जगाने के अलावा कमरे का तापमान माप सकता है और इसमें लगे सेंसर कमरे में

शोरगुल के स्तर की जानकारी दे सकते हैं। सुबह होने के समय इससे जुड़ा लैंप अपनी रोशनी बदलने लगता है और व्यक्ति को जगाने की तैयारी करने लगता है।

सूखा पड़ने से हुआ माया सभ्यता का अंत– एक नवीन शोध में कहा गया है कि करीब एक सदी लंबे सूखे के कारण संभवतः प्राचीन माया सभ्यता का अंत हुआ होगा। शोधकर्ताओं ने बेलिज के मशहूर भू–जल गुफा, जिसे "ब्लू होल" के नाम से जाना जाता है और उसके आसपास की लगूनों से लिए गए खनिजों का विश्लेषण किया और पाया कि 800 से 900 ई0 के मध्य में एक भयंकर सूखा पड़ा था। यह वही समय था जब माया सभ्यता का अंत हुआ था। हालांकि, यह ऐसा शोध नहीं है जिसमें पहली बार माया सभ्यता के अंत का कारण सूखे को बताया गया हो लेकिन नए नतीजे इस विचार को पुख्ता करते हैं कि सभ्यता के खात्मे में सूखे की भूमिका अवश्य थी। जर्नल "लाइव साइंस" की रिपोर्ट के अनुसार 300 ई0 से लेकर 700 ई0 तक माया सभ्यता युकैटन प्रायद्वीप पर फली–फूली। 700 ई0 के बाद की सदियों में सभ्यता की निर्माण गतिविधियां धीमी पड़ गई, युद्ध की वजह से संस्कृति में गिरावट आई और अराजकता फैल गई।

आठ हजार साल पहले भी बनाया जाता था जैतून का तेल– ऑलिव ऑयल या जैतून का तेल आज के जमाने में ही इतना लोकप्रिय नहीं है बल्कि इजरायल में आठ हजार साल पहले भी लोग इसका प्रयोग करते थे। शोध पत्रिका "प्लांट साइंस" में प्रकाशित एक नये शोध से यह खुलासा हुआ है कि 8000 ईसा पूर्व भी जैतून का तेल इस्तेमाल किया जाता था। उत्तरी इजरायल के गैलिली इलाके में "एनजिप्पोरी" में खुदाई के दौरान एक मिट्टी का बर्तन पाया गया था। इजरायल के प्राचीन धरोहर प्राधिकरण का दल जानना चाहता था कि इस मिट्टी के बर्तन में क्या रखा हुआ था। यह जानने के लिए विशेषज्ञों के दल ने मिट्टी के पात्र में रखे गये सामान के अवशेष की जाँच शुरु कर दी। जाँच में पाया गया कि इस पात्र में सबसे प्राचीन जैतून का तेल रखा गया था। यह पात्र ताम्र पाषाण युग का था। जाँच की दोबारा पुष्टि करने के लिए शोधकर्ताओं ने एक नए मिट्टी के पात्र में एक साल पुराने जैतून के तेल को रखा और पाया कि दोनों नमूनों के बीच बहुत समानताएं हैं। इस नए शोध से खुलासा हुआ है कि जैतून के पौधे को इजरायल के लोग बहुत पहले ही अपने प्रयोग के लिए उगाने लगे थे।

वैज्ञानिकों ने बनाई एक नई एंटीबायोटिक– एक बड़ी सफलता के तहत वैज्ञानिकों ने लगभग 30 साल में पहली बार एक नई एंटीबायोटिक खोजने में कामयाबी हासिल की है। कमाल की बात यह है कि वैज्ञानिकों ने गंदगी के ढेर में एक बेहद महीन चिप डालकर "टैक्सोबैक्टिन" नामक इस एंटीबायोटिक को खोजा है। बोस्टन और बॉन, जर्मनी के शोधकर्ताओं ने बताया कि यह एक प्राकृतिक एंटीबायोटिक है जो टी.बी., सेप्टीसीमिया, न्यूमोनिया जैसी संक्रामक बीमारियों का इलाज आसानी से कर सकती है। चूहों पर इस दवा का सफलतापूर्वक परीक्षण किया जा चुका है। इस दौरान इसका कोई साइड इफेक्ट भी नहीं दिखा। इंसानों पर इसका जल्दी ही प्रयोग किया जाने वाला है। उपचार के लिए एंटीबायोटिक वैसे तो पूरी दुनिया में दशकों से प्रयोग की जा रही है, लेकिन बेवजह इस्तेमाल से रोगों से लड़ने की इसकी क्षमता को वर्तमान में कम कर दिया है। इसीलिए नई एंटीबायोटिक की खोज को अहम कामयाबी के तौर पर देखा जा रहा है। इस दवा के जल्दी ही बाजार में उपलब्ध होने की उम्मीद है। यह एंटीबायोटिक बैक्टीरिया पर सीधे दो गुना हमला बोलती है। इसकी यही खूबी इसे पुराने एंटीबायोटिक से अलग और असरदार बनाती है।

अमेरिका में सैन फ्रांसिस्को स्थित "एंटी माइक्रोबियल रेजिस्टेंस विद इंफेक्शन्स डिसीज सोसायटी" के निदेशक "हेनरी चेंबर्स" ने कहा कि अभी तक दुनिया में ऐसी कोई दवा नहीं बनी है, जिसके लिए समय के साथ बैक्टीरिया अपनी प्रतिरोधकता को विकसित न कर लेते हों। यानि एक ही दवा जब बार–बार दी जाती हो तो अक्सर ये बैक्टिीरिया उस दवा से लड़ने में सक्षम हो जाते हैं, लेकिन नई खोज के तहत टेक्सोबैक्टिन नामक इस एंटीबायोटिक दवा से ये बैक्टीरिया लड़ नहीं पायेंगे। इसलिए डॉक्टरों के लिए यह वरदान साबित होगी।

तकनीक का कमाल, लकवाग्रस्त हाथ में हलचल– आए दिन तकनीक के ऐसे कारनामें सामने आते हैं, जिन्हें देखकर हर कोई वाह–वाह कर उठता है। अमेरिका के "ऑहियो स्टेट यूनिवर्सिटी वेक्सनर मेडिकल सेंटर" और "बैटले मेमोरियल इंस्टीट्यूट" के संयुक्त प्रयासों से शोधकर्ताओं ने चार सालों से लकवाग्रस्त व्यक्ति के हाथों में हलचल पैदा कर दी, वह भी उसके मस्तिष्क के पूर्ण नियंत्रण के साथ। 23 वर्षीय "इयान बर्कहार्ट" का शरीर चार साल पहले लकवाग्रस्त हो गया था। इसके बाद से ही वह अपने हाथों का उपयोग करने में अक्षम हो गया था। शोधकर्ताओं ने एक बेहद छोटे चिप "न्यूरोब्रिज" को इयान के मस्तिष्क में लगाकर इस कारनामे को अंजाम दिया। यह न्यूरोब्रिज प्रभावित क्षेत्र को पार करते हुए मस्तिष्क के संकेतों को सीधे इयान की मांसपेशियों तक पहुँचा देता है। न्यूरोब्रिज को तैयार करने में वैज्ञानिकों को दस साल का वक्त लगा। इयान के हाथ को इस इलाज के लिए तैयार करने में भी लम्बा वक्त लगा और फिर तीन घंटे के ऑपरेशन के पश्चात् चिप को उसके दिमाग में लगा दिया गया। इयान ने कहा, "यह एक स्वप्निल सा अनुभव है। मैं यह स्वीकार कर चुका था कि अब मैं कभी अपने हाथ का इस्तेमाल नहीं कर सकूंगा"।

अब पेड़ पर पैदा हो सकती है बिजली– अब वो दिन दूर नहीं जब बिजली पेड़ पर पैदा की जायेगी। इस परिकल्पना को साकार करने के लिए फ्रांसीसी इंजीनियरों ने एक कृत्रिम पेड़ विकसित किया है। यह पेड़ हवा के उपयोग से बिजली पैदा कर सकता है। इस कृत्रिम पेड़ "विंड ट्री" को एक फ्रांसीसी टीम ने तैयार किया है। पेरिस कंपनी के संस्थापक "जेरोम मिचौड लेरिविरे" ने बताया, इस पेड़ को बनाने का ख्याल उन्हें तब आया जब उन्होंने हवा न चलने के बावजूद पत्तियों को हिलते देखा। इस कंपनी की अगले वर्ष बाजार में विंड ट्री बेचने की योजना है। उन्होंने बताया कि इससे ऊर्जा को वाट में परिवर्तित किया जायेगा। इस पेड़ की "पत्तियों" में इस तरह के छोटे–छोटे ब्लेड लगाये गये हैं जो हवाओं को अंदर की तरफ मोड़ते हैं। यानि यह विंड ट्री हवा के बहाव से बिजली पैदा करती है। उन्होंने कहा कि इंजीनियरों की टीम को तीन साल के शोध के बाद सफलता मिली है। इंजीनियरों ने तीन साल के शोध के बाद 26 फीट ऊँचा प्रोटोटाइप पेड़ विकसित किया है। इसे उत्तर–पश्चिम फ्रांस के ब्रिटनी शहर के प्लूमरबोदोयू कम्यून में लगाया गया है। इंजीनियरों को उम्मीद है कि इस शोध के चलते वास्तव में लोग अपने घरों और शहरी केन्द्रों में इसका उपयोग कर सकते हैं।

सेकेंड के दस खरबवें हिस्से में उबलेगा पानी– सर्दियों में सुबह–सुबह नहाने के लिए पानी गर्म करने की समस्या होती है। कैसा हो यदि पानी पलक झपकते ही उबल जाये। अब ऐसा होना मुमकिन हो सकेगा क्योंकि विज्ञानियों की टीम ने ऐसी तकनीक विकसित की है, जिसके प्रयोग से पानी को सेकेंड के दस खरबवें हिस्से में ही उबाला जा सकेगा। विज्ञानियों की टीम में एक भारतीय मूल का विज्ञानी भी शामिल है। यह एक सैद्धांतिक अवधारणा है और अभी तक इसका प्रदर्शन नहीं किया गया है। इस अवधारणा के मुताबिक कुछ मात्रा में पानी को 600 डिग्री सेल्सियस तापमान तक पहुँचने में आधा पीको सेकेंड(सेकेंड का दस खरबवां भाग) लगे। इसे अब तक का सबसे तेज पानी गर्म करने का तरीका माना जा रहा है। पानी गर्म करने का यह तरीका विकिरण पर आधारित है। सेंटर फॉर फ्री इलेक्ट्रॉन लेजर साइंस(सी.एफ.ई.एल.) के "डॉ0 आरिओल वेंड्रेल" के मुताबिक पानी को 600 डिग्री सेल्सियस तक गर्म करने में आधा पीको सेकेंड समय लगेगा। सबसे अच्छी बात यह है कि इस दौरान पानी के अणुओं को कोई नुकसान नहीं होगा। (सी.एफ.ई.एल.) का गठन संयुक्त रूप से डेनमार्क इलेक्ट्रॉन सिंक्रोटॉन, हैंबर्ग विश्वविद्यालय और जर्मन मैक्सप्लैंक सोसायटी वेंड्रेल ने किया है।

आर्टिफिशियल रेटिना ने बढ़ाई नेत्रहीनों की उम्मीद– जापान के शोधकर्ताओं ने एक ऐसा आर्टिफिशियल रेटिना विकसित करने में सफलता पाई है, जिससे नेत्रहीन लोगों की आँखों की रोशनी लौटाने की उम्मीद बढ़ गई है। इस "आर्टिफिशियल विजन सिस्टम" से उन लोगों को देखने में काफी मदद मिलेगी, जिनकी किसी बीमारी या अन्य वजह से आँखों की रोशनी कमजोर हो गई है। आजकल की डिजिटल दुनिया में आँखों की बीमारियों का जोखिम काफी बढ़ गया है। जापान में तो इन सबकी वजह से करीब 3 लाख लोग अपनी आँखों की रोशनी गंवा चुके हैं। इन सबको देखते हुए जापान के शोधकर्ता लगातार इस बात की कोशिश में लगे हैं कि ऐसे लोगों की देखने की क्षमता को कैसे वापस लाया जाए। शोधकर्ताओं ने ओसाका यूनिवर्सिटी हॉस्पिटल में नेत्रहीनों की आँखों में आर्टिफिशियल रेटिना लगाया गया। ये रेटिना इलेक्ट्रोड से बनाये गये हैं, जिनकी मदद से रोगी की आँखों की रोशनी वापस आ गई। "ओसाका यूनिवर्सिटी" ने इसके लिए जिस तकनीक को इजाद किया है, उसके तहत नेत्रहीन व्यक्ति को एक चश्मा पहनाया जाता है जिसमें छोटा सा चार्ज कपल्ड डिवाइस सी.सी.डी. से हासिल इमेज डाटा शॉट को गले के पास लगे इमेज प्रोसेसिंग डिवाइस को भेजता है। इस इमेज डाटा को कनवर्ट कर इस तरह से हासिल सिग्नल को रेटिना के आउटर पार्ट स्लेरा में लगाए 6 वर्ग मिलीमीटर के इलेक्ट्रोड चिप के द्वारा रेटिना सेल्स को भेजा जाता है। इस प्रकार नेत्रहीन को देखने में मदद मिलती है।

छः करोड़ साल पहले थी हिमालय जैसी श्रंखला– वैज्ञानिकों ने इतिहास में दबी 2500 किलोमीटर रेंज में फैली विशाल पर्वत श्रंखला का पता लगाया है, जो वर्तमान हिमालय रेंज की तरह ही कभी धरती पर मौजूद थी। वैज्ञानिकों के अनुसार उस श्रंखला का अस्तित्व 6 करोड़ साल पूर्व था, जब धरती पर जीवन की शुरुआत हो रही थी। ये पर्वत श्रंखला पश्चिमी अफ्रीका और उत्तर पूर्व ब्राजील तक फैली हुई थी, जो उस समय सुपर कांटिनेंट गोंडवाना का हिस्सा थे। इसके सबूत उत्तर–पूर्व ब्राजील में पाए गए हैं। ये रिसर्च "द ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी", ऑस्ट्रेलिया "जिओलॉजिकल सर्वे ऑफ ब्राजील", ब्राजील के शोधकर्ताओं ने मिलकर की है। "द ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी" के प्रोफेसर "डैनियल रूबेट्टो" ने कहा कि इसकी विशालता ही इसके खत्म होने का कारण बनी। इससे निकले पदार्थ बड़ी मात्रा में समुद्र में समा गए, जिससे जीवन को उभरने के लिए उपयुक्त न्यूट्रिएंट्स मिले। रूबेट्टो के अनुसार वैज्ञानिक बहुत पहले से ये अनुमान लगाते रहे हैं कि समुद्र में जीवन विकसित करने के पीछे बहुत बड़ा श्रेय पर्वत श्रंखलाओं को जाता है, जो समुद्र को आवश्यक भोजन मुहैया कराते हैं। ये बात अब साबित हो गई हैं कि पर्वतों के कारण महासागरों की केमिस्ट्री बदल जाती है। ये खोज धरती पर शुरुआती चरण में हिमालय के स्तर की पर्वत श्रंखला होने का पुख्ता सबूत है। सह शोधकर्ता प्रोफेसर "जॉर्ज हर्मन" ने बताया कि भले ही पहाड़ समाप्त हो गये हों लेकिन इनकी जड़ों में मौजूद पत्थर सच्चाई बयां करते हैं। ये माउंटेन रेंज दो महाद्वीपों के टकराने से बनी थी। इस टकराव के कारण चट्टानें 100 किलोमीटर अंदर धंस गई थीं। महाद्वीपों के टकराने से उच्च ताप और दबाव बना, जिससे नए मिनरल्स तैयार हुए। शोधकर्ताओं के अनुसार पर्वतों के क्षरण से इसकी जड़े फिर से अपनी जगह पर आ गई, जो उत्तरी पूर्व ब्राजील में मिलीं। शोधकर्ताओं ने यह शोध हाइटेक उपकरणों से किया जिसके

परिणाम से वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला कि 6 करोड़ साल पहले उत्तर–पूर्व ब्राजील से पश्चिमी अफ्रीका तक हिमालय जैसी विशाल पर्वत श्रंखला धरती पर विद्यमान थी।

मांसाहारी पौधे भी अपना रहे हैं शाकाहार– आजकल कई लोग मांसाहार को छोड़कर शाकाहार अपना रहे हैं। लेकिन अगर आप सोचते हैं कि शाकाहार की सोच सिर्फ मनुष्यों में है तो आप बिल्कुल गलत हैं। एक ताजा अध्ययन से पता चला है कि कुछ कीटभक्षी पौधे भी शाकाहार को अपना रहे हैं। यूट्रीकुलेरिया प्रजाति के ब्लैडरवर्ट्स कीटभक्षी पौधों की प्रजाति है, जो छोटे–छोटे कीटों का आहार करते हैं। हालांकि नए शोध से पता चला है कि अब ये पौधे संतुलित पोषण के लिए शैवाल और परागों का सेवन करने लगे हैं। ये पौधे चूसक अंगों के द्वारा बिजली की तेजी से अपने शिकार को पकड़ लेते हैं और उन्हें निकल भागने से रोकने के लिए दरवाजे बंद कर देते हैं। एक बार फंस जाने के बाद कीट दम घुट जाने से मर जाते हैं, जिसके बाद पौधे उन्हें एंजाइम के रूप में विघटित कर पचा जाते हैं। शाकाहार अपनाने से पहले इन पौधों के आधार ग्रहण करने की यही प्रक्रिया रहती थी। ऑस्ट्रिया के "वियना विश्वविद्यालय" के शोधकर्ता "कोबर पेरूटका" और "वोलफ्रेम एडलेसनिग" के अनुसार यूट्रिकुलेरिया प्रजाति के कीटभक्षी पादप शैवाल और पराग जैसे आहार की ओर झुक रहे हैं। शोध पत्रिका, "ऐनाल्स ऑफ बॉटनी" के नवीनतम् अंक में प्रकाशित इस शोध के अनुसार, ऐसे इलाकों में जहाँ शैवाल प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं और कीटों की कमी होती है वहाँ शाकाहारी पौधे कीटभक्षी पौधों की अपेक्षा आकार में बड़े पाये गये।

हड्डियां बचाएंगी यान को राख होने से– सूरज के नजदीक जाने वाले किसी भी यान को राख होने से बचाना ही सबसे बड़ी चुनौती है। वैज्ञानिक "क्रिस ड्रेपर" ने जानवरों की हड्डियों का प्रयोग करके इस चुनौती का जवाब ढूंढा है। उन्होंने टाइटेनियम की फाइल पर जानवरों की हड्डियों से बना एक लेप लगाया है जो सौर यान को जलने से बचायेगा। यह पत्ती 0.20 मिलीमीटर मोटी है और इसकी सतह पर हड्डियों की काले रंग की परत चढ़ी है। यह यान सन् 2017 में अंतरिक्ष में भेजा जायेगा जो सूरज की कक्षा में उसके चारों ओर घूमेगा, यह किसी भी तारे के सबसे नजदीक जाने वाला यान होगा। यह अंतरिक्ष यान सौर प्रणाली में छोड़े जाने वाले उच्च ऊर्जा वाले कणों का विस्तृत अध्ययन करेगा। यह न केवल हमें सूरज के बारे में बेहतर सूचना उपलब्ध करायेगा बल्कि हम भी जान पायेंगे कि पृथ्वी पर इसका कैसा असर होता है। जब इस यान को अंतरिक्ष में छोड़ा जायेगा तो उसका जो हिस्सा सूरज के सामने होगा उसे 550 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान का सामना करना पड़ेगा जबकि यान का जो हिस्सा सूरज के सामने नहीं होगा उसे 200 डिग्री सेल्सियस तक ताप झेलना होगा। ऐसी भयानक गर्मी में यान के अंदर के सभी इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों और यंत्रों को सही सलामत रखने की चुनौती होगी। ड्रेपर कहते हैं कि, "सारी चिंता यही थी कि हीटशील्ड बनाने के लिए हम ऐसा कौन सा पदार्थ इस्तेमाल करें जिससे हमारे उपकरण जलें नहीं।" हीटशील्ड इतना हल्का तो होना ही चाहिए कि वह रॉकेट को जमीन से ऊपर जाने में मदद करे और सूरज की गर्मी को वह अंतरिक्ष में पाँच वर्षों तक झेल सके। हीटशील्ड की बाहरी सतह पर खुले दरवाजे वाले छिद्र भी होने चाहिए ताकि यान में लगे उपकरण सूरज को देख सकें जिनका अध्ययन उनको करना है। हीटशील्ड 40 सेंटीमीटर मोटे सैंडविच की तरह है जिसके बीच में 8 से 18 परते हैं। इसकी बाहरी परत टाइटेनियम से बनी है। इस धातु का चुनाव इसकी मजबूती ओर लचीलेपन के लिए किया गया है। सबसे बड़ी बात ये है कि यह डेढ़ हजार डिग्री तक की गर्मी झेल सकता है।

700 समुद्री प्रजातियों को प्लास्टिक के कचरे से खतरा– एक नये वैश्विक अध्ययन में पाया गया है कि प्लास्टिक और कांच जैसे मानव–निर्मित कचरे के कारण समुद्री जीवों की लगभग 700 प्रजातियों पर खतरा मंडरा रहा है। ब्रिटेन की "प्लाई माउथ यूनिवर्सिटी" के शोधकर्ताओं ने दुनिया भर से जुटाई गई रिपोर्ट में इस बात के साक्ष्य पाये गये हैं कि 44 हजार जीव–जन्तु कचरे को ग्रहण कर रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ(आई0यू0सी0एन0) की रेड डाटा बुक की लाल सूची में 92 प्रतिशत मामलों के लिये प्लास्टिक को वजह बताया गया है एवं सभी प्रजातियों में से लगभग 17 प्रतिशत को खतरे में या खतरे के कगार पर बताया गया है। इनमें सील मछली, लागरहेड टर्टल और सूटी शियर वॉटर(एक पक्षी) भी शामिल हैं। "मरीन पॉल्यूशन" बुलेटिन में प्रकाशित शोध पत्र में इसके लेखकों "सारा गाल" और "प्रोफेसर रिचर्ड थाम्पसन" ने उन विविध स्रोतों से जुटाये गये विभिन्न तथ्य यथा– निगले जाने, पारिस्थितिक तन्त्रों को नुकसान जैसे साक्ष्य प्रस्तुत किये गये हैं। शोधकर्ता सारा ने कहा, "समुद्री जीवन पर कचरे का प्रभाव चिंता का विषय है और इसके प्रभाव अत्यन्त व्यापक हो सकते हैं। इसके परिणाम कचरा निगले जाने ओर कचरे में जीवों के उलझ जाने के रूप में सामने आ सकता है, जो कि समुद्री पारिस्थितिक तंत्र के लिये अत्यधिक नुकसानदायक है।"

जापान में ड्रोन विमानों से ज्वालामुखी पर नजर रखी जायेगी– जापान में ज्वालामुखी फूटने सम्बन्धी जानकारियां लेने के लिए चालक रहित ड्रोन विमानों का प्रयोग किया जायेगा। ऐसे ड्रोन विमानों की संरचना जापान के सरकारी भूमि, बुनियादी ढांचा, परिवहन व पर्यटन मंत्रालय के समर्थन से एनरूट कंपनी द्वारा तैयार किया गया है। ये विमान ऐसे विशेष उपकरणों से लैस हैं जिनकी सहायता से ज्वालामुखी से निकलने वाली गैसों और राख के नमूने एकत्र किये जा सकते हैं। इस प्रकार मिली सामग्री का अध्ययन करने के आधार पर विशेषज्ञों द्वारा ज्वालामुखियों के फूटने की अधिक सटीक ढंग से भविष्यवाणी की जा सकेगी। इसके अलावा, ड्रोन विमानों पर ऐसे कैमरे लगाए जायेंगे जिनकी सहायता से जमीन की सतह का

त्रि–आयामी नक्शा बनाना संभव होगा। प्राकृतिक आपदाओं के दौरान लापता हुए लोगों को खोजने के लिए भी ड्रोन विमानों का प्रयोग किया जा सकता है।

शोधकर्ताओं ने बनाया आसमानी खेत यानी स्काईफार्म का डिजाइन– दुनिया भर के बड़े शहरों में कम होते पेड़ बड़ी समस्या बनते जा रहे हैं, लेकिन कोरिया के शोधकर्ताओं ने इसका हल खोज निकाला है। उन्होंने ऐसी इमारतों का डिजाइन तैयार किया है, जो शहर को हरा–भरा बना देंगी। इन्हें स्काईफॉर्म यानी आसमानी खेतों का नाम दिया गया है। शोधकर्ताओं का दावा है कि यह इमारत पर्यावरण की चुनौतियों का हल होगी। हाल में इस डिजाइन को पुरस्कृत भी किया गया है और उम्मीद है कि ऐसी इमारतों का निर्माण जल्द आरम्भ हो जायेगा। इस इमारत का डिजाइन भी पेड़ जैसा होगा। इसमें जड़, तना, टहनी और पत्ते जैसे भाग होंगे। जड़ का हिस्सा इमारत में पानी पहुँचाने और उसके पुनः शोधन का काम करेगा। तने की जगह इंडोर गार्डन, टहनी की जगह सामान ले जाने के लिए पुल जैसी संरचना और पत्तों की जगह खेतों वाले डेक होंगे। वहीं 44 हजार वर्ग फुट का सोलर पैनल खेतों को रोशन करेगा। यहाँ जलकृषि, बॉयोनिक गार्डन, हरियाली देखने आने वालों के लिए व्यूयिंग डेस्क, कैफेटेरिया, किसानों के लिए बाजार, पानी शुद्धिकरण सुविधा और अक्षय ऊर्जा उत्पादन सुविधा होगी। रिपोर्ट के अनुसार यह एक बाग होगा, जिसकी बची जगह का प्रयोग शहरों की दूसरी बड़ी समस्या यानी पार्किंग के लिए किया जायेगा।

नासा की एक और सफलता, मिला ब्लैक होल परिवार का बड़ा सदस्य– नासा ने चंद्र एक्स–रे ऑब्जर्वेटरी की मदद से ब्लैकहोल की पृष्ठभूमि का पता लगाने के लिए एक लौकिक वस्तु की खोज की है। यह वस्तु अंतरिक्ष में ब्लैकहोल के अस्तित्व, निर्माण और उसके आसपास की चीजों पर उसके प्रभाव को लेकर कई सवालों के जवाब ढूंढने में मदद कर सकता है। एन.जी.सी.2276–3सी कही जा रही वस्तु सर्पिल आकाशगंगा के पास मिली है, जो पृथ्वी से 10 करोड़ प्रकाश वर्ष दूर है। एन.जी.सी.2276–3सी को अंतरिक्ष विज्ञानी "इंटरमीडिएट–मास ब्लैकहोल"(आई.एम.बी.एच.) कह रहे हैं। ब्रिटेन की "यूनिवर्सिटी ऑफ डरहम" के वैज्ञानिक टिम रॉबर्ट ने कहा कि अंतरिक्ष विज्ञानी बड़ी कौतुकता से इन मध्यम आकार के ब्लैकहोल का अध्ययन कर रहे हैं। उनके अस्तित्व के संकेत मिले हैं, लेकिन आई.एम.बी.एच. ब्लैकहोल परिवार के एक ऐसे सदस्य के रूप में प्रकट हुआ है, जो गुमनामी में ही रहना चाहता है। अध्ययन का नेतृत्व कर रहे "हार्वर्ड स्मिथसोनियन सेंटर फॉर एस्ट्रोफिजिक्स" के मारमेजकुआ ने कहा कि जीवाश्म विज्ञान की तरह ही हमें आकाशगंगा में कई बार अपनी खोजों की गहराई में जाना पड़ता है, जो यहाँ से करोड़ों प्रकाश वर्ष दूर है। कई वर्षों से अंतरिक्ष वैज्ञानिकों ने छोटे ब्लैकहोल के अस्तित्व के निर्णायक प्रमाण ढूंढे हैं, जो सूर्य के द्रव्यमान से पाँच से 30 गुना ज्यादा द्रव्यमान वाले हैं। आई.एम.बी.एच. के महत्वपूर्ण होने का कारण यह है कि ये उस उत्पत्ति का आरम्भ हो सकते हैं, जिससे ब्रह्माण्ड में विशालकाय ब्लैकहोल का निर्माण हुआ है।

न्यूट्रिनो कणों की खोज और अध्ययन के लिए बनायी जा रही भूमिगत वेधशाला– न्यूट्रिनो कणों की खोज और अध्ययन के लिए तमिलनाडु में केरल सीमा के पास भूमिगत वेधशाला बनायी जा रही है। यह वेधशाला चट्टान से 1200 मीटर गहराई पर होगी तथा इसमें कई गुफाएं होंगी। तमिलनाडु के थेनी जिले की बोडी पहाड़ियों में कई संस्थाओं के सहयोग से इस वेधशाला की स्थापना की जा रही है। इस परियोजना में परमाणु ऊर्जा विभाग और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग मिलकर सहयोग दे रहे हैं जबकि परमाणु ऊर्जा विभाग केन्द्रीय एजेन्सी के तौर पर काम करेगा। परियोजना का उद्देश्य न्यूट्रिनो पर मूलभूत अनुसंधान करना है। देश के 21 अनुसंधान संस्थान, विद्यालय और आई0आई0टी0 इस परियोजना में सम्मिलित हैं। माना जा रहा है कि न्यूट्रिनो कण से अंतरिक्ष से संबंधित कई जानकारियां प्राप्त की जा सकती हैं। इसी कारण से वैज्ञानिकों की इसके अध्ययन में विशेष रूचि है। फोटॉन के बाद न्यूट्रिनों प्रचुर मात्रा में ब्रह्माण्ड में विद्यमान है, प्रत्येक एक घन सेंटीमीटर में लगभग 300 न्यूट्रिनों होते हैं। ये कण सूर्य जैसे तारों में रेडियोधर्मी शय और वायुमण्डल से कॉस्मिक विकिरणों की आपसी क्रिया से उत्पन्न होते हैं। साथ ही इन्हें नाभिकीय संयत्रों में भी निर्मित किया जा सकता है।

वैज्ञानिकों का मानना है कि 15 अरब वर्ष पहले ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बाद जो न्यूट्रिनो पैदा हुए थे वे आज भी सक्रिय हैं। सूर्य के केन्द्र में परमाणु संलयन की वजह से जो न्यूट्रिनो उत्पन्न हुए थे वे पृथ्वी के ऊपर घूमते रहते हैं। मानव शरीर में मौजूद रेडियोधर्मी पदार्थ पोटेशियम–40 लगातार न्यूट्रिनो का उत्सर्जन करता है, प्रति सेकेण्ड लगभग 100 खरब न्यूट्रिनो सूर्य और अन्य आकाशीय पिंडों से उत्सर्जित होकर हमारे शरीर से टकराते हैं लेकिन इससे हमें कोई नुकसान नहीं पहुंचता। सन् 1930 में जाने–माने भौतिकविद् पाउली को प्रयोगों से पता चला कि जब कोई अस्थिर आणविक नाभिक एक इलेक्ट्रॉन को छोड़ता है तो उसकी नयी ऊर्जा और गति उम्मीद के मुताबिक नहीं होती थी। इस समीकरण को संतुलित करने और ऊर्जा के संरक्षण के सिद्धांत को कायम रखने के लिए पाउली ने एक सैद्धांतिक कण की अवधारणा प्रस्तुत की। सन् 1933 में भौतिक विज्ञानी "फर्मी" ने इस कण को न्यूट्रिनो नाम दिया। इस कण का आवेश न तो धनात्मक था और न ही ऋणात्मक। यानी इसके अस्तित्व को साबित करना कठिन था। पूरी दुनिया में बहुत से वैज्ञानिक पिछली पूरी सदी के दौरान न्यूट्रिनो को खोजते रहे। भारत में इस पर अनेक शोध हुए हैं। कॉस्मिक किरणों से बनने वाली न्यूट्रिनो का सबसे पहले पता भारत में ही चला था। सन् 1965 में कोलार सोने की खदानों में करीब 2.3 किलोमीटर की गहराई पर वायुमंडलीय न्यूट्रिनो खोजा गया

था। सन् 1990 के दशक में कोलार सोने की खदानों के बंद हो जाने से भारत के न्यूट्रिनो कार्यक्रम का रास्ता रुक गया। अब एक बार फिर इस क्षेत्र में अध्ययन के लिए काम करने की पहल शुरू हुई है। इसी के तहत तमिलनाडु में केरल सीमा के पास लगभग 1200 मीटर ऊँचे चट्टानी पहाड़ों के नीचे वेधशाला बनायी जायेगी जिसमें 132 मीटर गुणा 26 मीटर गुणा 20 मीटर आकार की एक बड़ी गुफा और कई अन्य छोटी–छोटी गुफाएं होंगी। इस परियोजना को केन्द्र और राज्य सरकार की विभिन्न एजेंसियों से हरी झंडी मिल चुकी है। वेधशाला में प्रयोग के दौरान कोई रेडियोधर्मी या विषैला पदार्थ नहीं निकलेगा।

दफ्तर में पौधे होने से काम में लगता है मन– नये शोध में पता चला है कि जिन दफ्तरों में पौधों की हरियाली होती है, वहाँ काम करने में मन ज्यादा लगता है। अपनी तरह के इस पहले शोध में विज्ञानियों ने पाया कि बिना पौधों वाले दफ्तर की तुलना में हरियाली होने पर काम में 15 प्रतिशत तक उत्पादकता लाई जा सकती है। अगर दफ्तर में पौधे हैं तो स्टाफ को लगता है वातावरण कम प्रदूषित होगा और काम में मन लगेगा। विज्ञानियों ने इसके लिए इंग्लैंड और नीदरलैंड के दो दफ्तरों में शोध किया। प्रमुख शोधकर्ता मॉरलन का कहना है कि दफ्तर में पौधे लगाने का निवेश बेहतर है और इसके नतीजे भी जल्द मिलने लगते हैं। इस शोध के परिणामों का उपयोग दफ्तरों के कार्य की गुणवत्ता बढ़ाने में किया जा सकता है।

संदर्भ

1. जैकसन, जे0 जे0 एवं सैम्यूल, टी0 एस0(2014) द इम्पैक्ट ऑफ क्लाइमेट चेंज ऑन सी लैवेल्स, जर्नल ऑफ इन्वायरमेंटल साइंसेज, खण्ड–70, अंक–4, मु0पृ0 233–2771।
2. इण्डिगो, ए0 सी0 तथा मॉव, बी0 ई0(2015) लेटेस्ट इन्वायरमेंटल अवेयरनेस नयूज साइंस, खण्ड–685, मु0पृ0 1220–1224।
3. www.sciencenews.com